Year-8; Sept. 2017
ISSN–2231-1130
UGC Sr. No. – 48398
VEETHIKA

हिन्दी कहानी का सामाजिक सन्दर्भ

राज कुमारी*

आज कहानी हिन्दी साहित्य की सर्वाधिक लोकप्रिय विधा है। इसका एक कारण तो यह है कि यह मनुष्य के हृदय के करीब है, किस्सा कहना और सुनना मनुष्य की आदिम प्रवृत्ति है। प्राचीन काल में प्रचलित आख्यान और उसके बाद प्रसिद्ध हुए किस्से, आधुनिक काल में अतिशय कल्पना, रहस्य और रोमांच हुआ करता था; जबकि आधुनिक काल की कहानियाँ यथार्थ पर आधारित है। ''कहानी एक संक्षिप्त, कसावपूर्ण, कल्पना–प्रसूत विवरण है जिसमें एक प्रधान घटना होती है जिसका विवरण इतना सूक्ष्म तथा निरूपण इतना संगठित होता है कि वह पाठकों पर एक निश्चित प्रभाव छोड़ता है।''[1]

गद्य साहित्य में कहानी सदैव ही मानव संवेदना के यथार्थ की अभिव्यक्ति एवं मनोरंजन का सशक्त माध्यम रही है। कहानीकार सुदर्शन लिखते है कि ''कहानी संसार की साधारण घटनाओं में से चुनी हुयी हर वह घटना है, जिससे पाठक का मनोरंजन हो सकता है। यह जरूर है कि कहानी लेखक के पास एक चौखटा हो और वह अपनी चुनी हुयी और छांटी हुयी घटना को उस चौखटे में बिठा सकने की क्षमता रखता हो। जिस तरह के लैंडस्केप संसार में पग–पग पर फैले हुए हैं, जरुरत ऐसी आँखों की है जो अपनी पसंद के लैंडस्केप को आसपास की चीजों से अलग कर सके और उसके गिर्द घेरा डाल सके। पुराने युग में तिलिस्मी कहानियों की सामग्री लेने के लिए परिस्तान और जादूनगरी में जाने की जरूरत थी। पर, आजकल के लेखक को कहानी लिखने के लिए जरूरी है देखने वाली आँख और लिखने वाली कलम की।''[2] मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है एवं मानव जीवन सदैव से परिवर्तनशील। प्रत्येक मनुष्य के पालन–पोषण एवं व्यक्तित्त्व निर्माण में समाज की भूमिका अहम होती है जिसके कारण मनुष्य अन्य मनुष्यों पर सहायता एवं सहयोग हेतु निर्भर रहता है।

समाज के स्वरूप में समय–समय पर होने वाले बदलाव उसकी तत्कालीन दशा को प्रभावित करते हैं इन बदलावों से कई बार समस्याएँ उत्पन्न हुई तो कहीं अनेक बदलाव सार्थक सिद्ध हुए। दोनों ही परिस्थितियों में सामाजिक विकास को अनुकूल बनाने के प्रयत्न होते रहे हैं। 'साहित्य समाज का दर्पण है।' महावीर प्रसाद द्विवेदी के इस कथन का प्रमुख आधार कथा साहित्य ही है। जिस प्रकार साहित्य–सृजन में समाज एक प्रेरक की भूमिका का निर्वाह करता है ठीक उसी प्रकार साहित्य समाज में व्याप्त जटिलताओं तथा उसकी वास्तविकताओं का गहन बोध कराकर समाज के उत्थान में सहायक सिद्ध होता है। ''मनुष्य जीवन में आरंभ से ही मनुष्य प्रकृति या परिवेश को अपने अनुकूल बनाने की प्रतिक्रिया में प्रकृति तथा विरोधी सामाजिक शक्तियों के विरूद्ध संघर्ष करता रहा है उन्हें अपने अनुकूल बनाता आया है। परंतु यह संघर्ष वह अकेला नहीं कर सकता था, अतः उसने अपने जैसे मनुष्यों के साथ रहना सीखा और उनसे स्थायी सबंध बनाने के लिए अपनी चेतना का रुपातंरण सामाजिक चेतना में किया और इस सामाजिक चेतना के अनेक सूक्ष्म सृजनात्मक रूपों को जन्म दिया, जैसे भाषा, संगीत, साहित्य आदि।''[3]

साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा 'कहानी' अपनी संक्षिप्तता एवं रोचकता के कारण अधिक लोकप्रिय हुई। साहित्य की प्रत्येक विधा पर स्वाभाविक रुप से सामाजिक परिस्थितियों का गहन प्रभाव पड़ता है। मुक्तिबोध के अनुसार ''किसी भी साहित्य को तीन तरह से देखा जाना चाहिए। एक तो वह किन स्रोतों से उद्‌गत होता है अर्थात् किन वास्तविकताओं के परिणाम स्वरूप वह साहित्य उत्पन्न हुआ है। दूसरे, उसका कलात्मक प्रभाव क्या है और तीसरे, उसकी अन्तःप्रकृति, रूप–रचना कैसी है। इस तीसरे प्रश्न को बिना पहले प्रश्न से मिलाए हम दूसरे सवाल का जवाब नहीं दे सकते।''[4] मुक्तिबोध यह मानते है कि कलाकार अपनी कल्पना के माध्यम से जीवन की पुनर्रचना करता है। कहानी

* रिसर्च फेलो, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

का स्वरूप कुछ तत्त्वों से निर्मित होता है जो कहानी में जान डालते है। इनमें से किसी एक तत्त्व का अभाव कहानी को अधूरा एवं प्रभावहीन कर देती है। कहानी–तत्त्व के विषय में जगन्नाथ प्रसाद शर्मा लिखते हैं कि ''कथानक के विकास में जो बात आवश्यक होती है वह है–बुद्धिसंगत प्रकृतत्त्व अथवा यथार्थता। यह यथार्थता सभी बातों में होनी चाहिए, वह चाहे चरित्र की कोई विशेष कृति हो चाहे किसी घटना की अभिव्यक्ति, चाहे वातावरण का चित्रण हो या देश–काल का कथन।''[5]

कहानी समाज को केन्द्र में रखकर लिखी जाती रही है। यथार्थ को उजागर करने के लिए कल्पना कथ्य को आकार देती है। जिस प्रकार कविता मानवीय अनुभूतियों को भाषा के माध्यम से दूसरों तक पहुँचाने वाली महत्त्वपूर्ण विधा है। उसी प्रकार कहानी के माध्यम से कहानीकार अपनी सामाजिक अनुभवों, सत्य घटनाओं, समस्याओं एवं स्मृतियों को कलात्मक रूप से दूसरों तक पहुँचाता है। राल्फ कोहेन लिखते है कि ''एक लेखक रचना के लिए विधा का चुनाव करते समय विचारधारात्मक चुनाव भी करता है क्योंकि विधा का चुनाव करते समय वह जीवन–जगत को देखने, रचने और व्यक्त करने की दृष्टि और पद्धति का भी चुनाव करता है।''[6] कहानी और कहानीकार की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि कहानी में सामाजिक घटनाओं को मापने एवं उनके प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने की क्षमता कितनी है। वास्वत में, प्रत्येक दौर की अधिकतर हिन्दी कहानियाँ अपने दौर के कालखण्ड से हमारा परिचय कराती है। प्रेमचन्द की कहानियाँ इसका उदाहरण है। प्रेमचन्द की कहानियों में वास्तविक सामाजिक यथार्थ है। प्रेमचन्द द्वारा लिखी गई ''कहानियाँ भारतीय सामाजिक जीवन को उसकी समग्रता में अपना विषय बनाती है और उनमें नगर और ग्राम–जैसा कोई आयास–साध्य विभाजन नहीं है। उनकी मानवीय संवेदना जब भारतीय तथा सामाजिक जीवन के किसी पहलू को लेकर आहत, विचलित या स्पंदित हुई है, उसे उन्होंने अपनी रचना का विषय बनाया है।''[7] वास्तविक रूप से कहानी अपने 'कथ्य' के द्वारा ही प्रभावशाली एवं प्रासंगिक बनती है। कहानी का एक उद्देश्य मनुष्य की आकांक्षाएं और समस्याओं को उजागर करना भी रहा है। कहानी अपने स्वरूप और शिल्प में जितना निखरती जा रही है, उतनी ही वह मानव जीवन के अधिक निकट आ रही है। कहानी जीवन के विभिन्न संघर्षों, सामाजिक तनावों एवं समस्याओं के वैविध्य को रच रही है। हमारी सामाजिक–राजनैतिक उथल–पुथल की घटनाएँ हिन्दी कथा साहित्य को सबसे अधिक प्रभावित करती है। इस बदलते सामाजिक यथार्थ की अनेक व्याख्याएँ हुई। कहानी के कई समीक्षकों एवं कहानीकारों द्वारा परिभाषित करने के प्रयास होते रहे हैं लेकिन उनके प्रयास बदलते समय की चकाचौंध से धुँधले पड़ने के कारण कहानी अपनी पुरानी स्थिति में वापस आ पहुँचती है। ''नगर–बोध की आरोपित, ओढ़ी हुई मानसिकता की कहानियाँ आज अप्रासंगिक हैं। हाँ, नगर–बोध हो या ग्रामीण–परिवेश, जो कहानियाँ सहज स्वाभाविक रूप में उभरती हैं, वे निश्चित रूप से पाठकों को बाँधती हैं। और ऐसी ही कहानियाँ कालावधि की कसौटी पर खरी उतरती हैं तथा सामाजिक परिवेश के शाश्वत मूल्यों को रूपायित करती हैं, दूसरी ओर यह यांत्रिक तर्क दिया जाता है कि नायक के पतन का कारण सामूहिक समाज का विकास है।''[8] प्रेमचन्द युग से लेकर विभिन्न कहानी आन्दोलनों (प्रेमचन्दोत्तर हिन्दी कहानी, नई कहानी, सचेतन कहानी, अ–कहानी, समांतर कहानी, जनवादी कहानी आदि) की यात्रा के कई पड़ाव आते रहे हैं। इन सभी कहानी आन्दोलनों ने बहस के दौर देखें एवं समाज को समग्र रूप में देखने का प्रयास किया। ''समकालीन कहानी में अनेक प्रकार की प्रवृत्तियाँ प्रचलित हैं तथा अनगिनत विषय कहानियों में निहित हैं, यथा– राजनीति, आर्थिक, देहधर्म की मांसलता, धार्मिक, ऊहापोह, सामाजिक व्यंग्य परन्तु ये सब विषय 'समाज' में ही समाहित हैं।''[9]

साहित्य जिस समाज से जुड़ा है वह समाज बहुत तेजी से बदला है। कहानीकार अपनी अलग भाषा एवं अनूठे शिल्प–विधान से कहानी लिख रहे हैं। भाषा समाज को परिभाषित करने का एक प्रमुख माध्यम है। इस कारण, समाज में आने वाले परिवर्तन भाषा को भी प्रभावित करते हैं। ''वस्तुतः आज की कहानी कला इतना विकास पा चुकी है कि उसे केवल पूर्व–निर्धारित कथा–समीक्षा के

मानदंडों पर नहीं कसा जा सकता। आज फैंटेसी, रूपक–कथा, दृश्य–कथा, व्यंग्य, आत्मवेशी–कथा, कथा–रिपोर्ताज आदि अनेक रूप सामने आये हैं। इन कथा–रूपों को यथार्थ के बदलते समकालीन सन्दर्भों और और जटिलताओं में रखकर देखने रचने की चिंता कहानीकारों में दिखती है।''[10]

आज कहानियों का व्याकरण बदला है, दुनिया बदली है एवं रचने का तरीका बदल गया है– नए कहानीकारों के पास कोरी भावुकता नहीं है, वे यथार्थ की पड़ताल का साहस भी रखते हैं। हिन्दी कहानी ने एक शताब्दी से अधिक समय की यात्रा तय की है। कहानी के लिखने एवं प्रस्तुत करने की प्रक्रिया में निरन्तर सुधार होता आया है। वर्तमान जीवन का शायद ही कोई तथ्य एवं सत्य हो, जो इधर हिन्दी कहानियों में 'कथ्य' बनकर स्थान न पाता हो। जीवन की प्रत्येक छोटी–बड़ी घटनाएँ एवं प्रसंगों को आधार बनाकर कहानियाँ अपने परिवेश कि किसी न किसी वस्तुस्थिति से अवगत करा रही है। और कहानीकार सामाजिक सन्दर्भों से साथ जुड़कर समकालीन परिदृश्य को अपनी कहानियों में लक्षित कर रहे हैं।

सन्दर्भ–

1. कहानीकार प्रेमचन्द : रचना दृष्टि और रचना शिल्प – शिवकुमार मिश्र, लोकभारती प्रकाषन, सं0– 2010, पृ0स0–8
2. प्रगतिशील वसुधा–97, जुलाई–सितंबर 2015, संपादक–राजेन्द्र शर्मा, पृ0स0–124
3. साहित्य का समाजशास्त्र–डॉ. दयानन्द तिवारी, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण 2013, पृ0स0–58
4. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका–डॉ. मैनेजर पाण्डेय, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला, संस्करण–2006, पृ0स0–63
5. प्रगतिशील वसुधा–97, जुलाई–सितंबर 2015, संपादक–राजेन्द्र शर्मा, पृ0स0–125
6. साहित्य के समाजशास्त्र की भूमिका–डॉ. मैनेजर पाण्डेय, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला, संस्करण–2006, पृ0स0–209–210
7. कहानीकार प्रेमचन्द : रचना दृष्टि और रचना शिल्प – शिवकुमार मिश्र, लोकभारती प्रकाशन, सं0–2010, पृ0स0–34
8. साहित्य का समाजशास्त्र–डॉ. दयानन्द तिवारी, प्रकाशन संस्थान, प्रथम संस्करण 2013, पृ0स0–44
9. वही, पृ0स0–43
10. प्रगतिशील वसुधा–97, जुलाई–सितंबर 2015, संपादक–राजेन्द्र शर्मा, पृ0स0–128